सारांश :-

प्रस्तुत शोध में सार्वभौम विकास एवं मूल्य शिक्षा के अंतर संबंध पर अध्ययन किया गया है। मानव सदियों से सुख–समृद्धि पूर्वक जीने की कामना की है। इस हेतु अनेकानेक प्रयास हुए हैं। इन प्रयासों को सुनिश्चित करने हेतु विविध सिद्धान्त व दर्शन प्रस्तुत किए गए। इस हेतु विविध व्यक्तियों ने धार्मिक राजनैतिक, वैज्ञानिक, सामाजिक आधार दिए। इन दर्शनों और वैज्ञानिक–वादों की रोशनी में मानव ने प्रगति के अनेक सोपान तय किए हैं, जिनके परिणाम स्वरूप आज मानव सामाजिक, आर्थिक, वैज्ञानिक, धार्मिक, राजनैतिक स्तर पर विकास की विविध दूरी तय करने के पश्चात वर्तमान में यहॉ तक पहुँच पाया है। वर्तमान का विश्लेषण करें तो यह दिखाई देता है कि तमाम प्रयासों के बावजूद मानव के सुख–समृद्धि पूर्वक जीने के लिए सार्वभौम विकास की कामना आज भी अधूरी है। यदि शिक्षा व्यवस्था मानवीय मूल्य परक हो अर्थात जो मानव आर्थिक

सार्वभौम विकास एवं मूल्य शिक्षा

हिना चावड़ा
सहायक अध्यापिका–मूल्य शिक्षा एवं विद्यार्थी परामर्शदात्री
विभाग–मानविकी एवं समाज विज्ञान, राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान, रायपुर,छ.ग.भारत.

विकास के साथ–साथ मानसिक विकास भी करता हो तब मानव अपने जीवन में आर्थिक रूप से एवं मानसिक रूप से सुखी–समृद्धि रहेगा तब सही अर्थ में विकास हुआ प्रमाणित होगा। स्वयं में विकास का प्रमाण सुख–शांति पूर्वक जीना, परिवार में समृद्धि के भाव के साथ जीना अर्थात मेरे पास आवश्यकता से अधिक उपलब्ध है ही का भाव एवं समाज में परस्पर विश्वास के साथ जीना जिससे बिना भय के जीना होगा अर्थात अभयता का वातारण विश्वास का वातावरण रहेगा। मानव मानवीय गुणो से संपन्न होकर जियेगा तो प्रकृति में संतुलन प्रमाणित हो ऐसा कार्य होगा। इस तरह यदि शिक्षा मूल्य परक होगी तो मानव का जीना मानवीयता पूर्ण होगा यही सार्वभौम विकास का स्वरूप है।

शब्द संकेत– सार्वभौम, विकास, मूल्य, शिक्षा, स्वयं, परिवार, समाज, प्रकृति

प्रस्तावना :-

आज विश्व के एक कोने में समृद्धि व सुविधा के भौतिक–रासायनिक साधनों से सुसज्जित संपन्न व्यक्ति सुख के लिए उतना ही व्याकुल है जितना कि इन साधनों से वंचित विश्व के दूसरे कोने में जी रहा विपन्न व्यक्ति। साधन उपलब्ध हों या न हों, व्यक्ति दुखी है, इसलिए आज का अधिकांश मानव उदास, थका हुआ, मानसिक तनाव, चिड़चिड़ापन के साथ असंतुलित लगता है। सुख न पा सकने की स्थिति में उसकी बौखलाहट मानसिक रूप से विक्षिप्त, उद्विग्न एवं मानसिक तनाव में अशांत दिखाई देता है। परिवार के स्तर पर जीवन सुखमय होने की जगह आंतरिक कलह, विवादों, झगड़ों से भरा दिखाई देता है। समाज, राष्ट्र के स्तर पर सार्वभौम विकास की असफलता, बढ़ती सांप्रदायिकता–जातिय हिंसा, आंतकवाद एवं युद्ध के रूप में दिखाई देती हैं। इस तरह वर्तमान मानव स्वयं, परिवार, समाज, राष्ट्र के स्तर पर सुख–समृद्धि पूर्वक जीने के स्थान पर दुखी व हताश है और उसकी मानसिक–आर्थिक विपन्नता क्रमशः बढ़ती जा रही है। निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि सदियों से प्रचलित व परिमार्जित तमाम अवधारणाएँ सार्वभौम विकास की दृष्टि से सफल नहीं हो सकी हैं। अर्थात सार्वभौम विकास की अवधारणा ही सही–सही स्थापित नहीं हो पाई है। इसे और गहराई से समझने का प्रयास करें तो ऐसा दिखाई देता है कि आज तक मानव, विकास क्या है? इसे ही स्पष्ट समझ नहीं पाया और इसी कारण विकास की तमाम अवधाणाएँ असफल हो गई हैं। विकास की अवधारणा स्पष्ट न हो पाने की वजह से वांछित सुख–समृद्धि पूर्वक जीने की व्यवस्था नहीं बन सकी है। विकास की अवधारणा को समझने के पहले यह जानना आवश्यक है कि विकास क्या है? विकास को कैसे परिभाषित किया जाए? विकास को विद्धानों ने अनेकानेक मतानुसार परिभाषित किया है। तमाम अवधारणाओं के मूलभूत आशय को एक पंक्ति में कहा तो वह सिर्फ इतना है कि ऐसी व्यवस्था जिसमें समस्त मानव सुख/शांति एवं सुविधा पूर्वक जी सकें। तब प्रश्न उठता है कि अस्तित्व में क्या ऐसी कोई व्यवस्था है, जिसमें हर मानव के सुख–समृद्धि पूर्वक जीने की संभावना है। इस प्रश्न के जवाब में दूसरा प्रश्न उठता है कि अस्तित्व में व्यवस्था कैसी है?

वर्तमान अवधारणा व प्रस्ताव–संपूर्ण धरती के विकास को हम तकनिकी उपलब्धता, सुविधा साधनों के ढेर से मापते है तब समझ में आता है कि किस देश में कितना विकास हुआ है लेकिन मानव को देखने पर अगर हम कहे कि मानव का विकास हुआ है या नही तब हम 'वह कैसा जी रहा है' के आधार पर माप सकते है जैसे वह सुख पूर्वक जी रहा है या उलझन, तनाव, द्वन्द, अशांति के साथ जी रहा है। मानव अगर समस्या के साथ जी रहा है अर्थात मानव का विकास नहीं हुआ है अर्थात मानव के चेतना का विकास नहीं हुआ है। सही समझ के जीना होने पर ही स्वयं को समझना, दूसरों को समझना संभव है उससे कम में नहीं। माँ के गर्भ से लेकर जन्म तक एवं जन्म से मृत्यु तक सभी अवस्था में मूल्य शिक्षा की बात की जा सकती है जिससे हर मानव शारीरिक एवं मानसीक दोनों स्तर से कैसे विकसित हो सकते है जान सकें। हर अवस्थाऐं एक दूसरे के पूरक रहेंगे एवं प्रमाणित होंगे। मानव विकास अर्थात मानव के चेतना का विकास अर्थात मानसिक विकास का प्रमाण मानवीयता पूर्ण आचरण पूर्वक जीना ही है। शारीरिक विकास शरीर स्वास्थ्य के अर्थ में प्रमाणित है एवं मानसिक विकास चेतना (जीवन) का विकास स्वयं में समाधान, परिवार में समृद्धि, समाज में अभयता एवं प्रकृति में संतुलन के अर्थ में प्रमाणित होगा। शरीर की उत्पत्ति तक का क्रम विकास क्रम विकास है एवं उसके आगे चेतना का विकास जागृति क्रम जागृति है। यही सार्वभौम विकास का स्वरूप है। इस विषय पर मध्यस्थदर्शन सहअस्तित्वाद के प्रकाश में ए.नागराज जी अमरकण्टक म.प्र. में निवासरत द्वारा ''चेतना विकास मूल्य शिक्षा'' के नाम से संपूर्ण को बहुत अच्छे से अध्ययन कराते है। जिसका अध्ययन किया जा सकता है एवं संपूर्ण को समझ कर जीने में परम्परा में प्रमाणित किया जा सकता है।

मूल्य शिक्षा–मध्यस्थ दर्शन, अस्तित्व में व्यवस्था को एक शब्द में ही स्पष्ट करता है–सहअस्तित्व में व्यवस्था को एक शब्द में ही स्पष्ट करता है– सहअस्तित्व। अर्थात अस्तित्व में हर कोई (सूक्ष्मतम से लेकर विशालतम तक) व्यवस्था सहअस्तित्व पूर्वक है। यही नहीं, इसी वजह से, प्रत्येक इकाई स्वयं में व्यवस्था है और अपनी से बड़ी इकाई में उसकी भागीदारी है, यही पूरकता है। पूरकता में इकाईयॉ, जब–जब सजी होती है, वहॉ व्यवस्था बनी दिखाई देती है। जब–जब पूरकता पूर्ण व्यवस्था बनती है, विकास होती ही है। इसे एक उदाहरण से समझा जा सकता है। पानी दो सूक्ष्म इकाईयों–हाइड्रोजन व ऑक्सीजन नामक तत्वों–से बना हुआ है। जब ये दोनों तत्व परस्पर पूरकता में एक–दूसरे के संपर्क में आते है तो एक नई रचना–पानी का निर्माण करते हैं। यह पानी जब मिट्टी के संपर्क में आता है तो मिट्टी में उपस्थित अणु इसमें घुल–मिल जाते हैं। इस घोल के संपर्क में कोई बीज आता है, तो वह अंकुरित होकर एक पौधा बनता है। इस तरह क्रमशः नई रचना बनती चली जाती है। अस्तित्व की विभिन्न इकाईयों की परस्परता व पूरकता में रचना–विरचना होती रहती है। ये प्रक्रिया ही 'विकास' कहलाती है। समस्त भौतिक रासायनिक रचना विरचना में क्रियाशील इकाईयॉ, जड़ इकाईयॉ हैं। मिट्टी हवा, पानी, पेड़–पौधे, पशु–पक्षी व मानव शरीर, इन सबकी रचना जड़–इकाईयों से होती है। अर्थात भौतिक–रासायनिक संसार के अर्थ में आदमी से लेकर प्रकृति की समस्त इकाईयॉ जड़ हैं। जड़ इकाईयॉ, जब–जब परस्पर पूरकता में होती हैं– क्रमशः विकास होता चला जाता है। इस पृथ्वी में, विकास क्रम को देखें तो, पूरकता पूर्ण व्यवस्था ही विकास का आधार है, स्पष्ट रूप से समझ आता है। अस्तित्व की व्यवस्था, पूरकतापूर्ण है, इसलिए जब–जब प्रकृति की इकाईयॉ पूरकता के अर्थो में व्यवस्थित होंगी, विकास निश्चित है। किंतु ऐसे में प्रश्न उठता है कि क्या भौतिक–संसाधनों का विकास सुख–समृद्धि का आधार है, तो जवाब मिलता है–नहीं। क्योंकि वे समस्त मानव, जो अनगिनत संसाधनों में जो रहे हैं, निश्चित रूप से सुखी नहीं हैं। अनंत साधनों की उपलब्धता, सुविधा को ही सुनिश्चित करती है, सुख को नहीं। साधनों में लिप्त व्यक्ति में सुख की चाहत, साधनों से विपन्न व्यक्तियों जैसी ही पाई जाती है।

विकास का आशय सुख के अर्थ में, बिल्कुल ही भिन्न समझ आता है। दरअसल अब तक जिसे सुख कहा जा रहा है, वह मात्र सुविधाओं का ही विकास है। सुविधा, सुख का आधार नहीं है। सुख का आधार है– एक मानव का दूसरे मानव के साथ परस्पर पूरकता के अर्थो में साथ–साथ जीना। दुर्भाग्यपूर्ण तथ्य तो यही है कि मानव पूरकता में प्रकृति की

शेष इकाईयों को देखता है, किन्तु जब दूसरे मानव के साथ जीने की बात आती है तो उसे नकार देता है। मानव जब तक पूरकता के अर्थ में दूसरे मानवों के साथ जिएगा नहीं, तब तक सुखी हो ही नहीं पाएगा। अस्तित्व में व्यवस्था सहअस्तित्वपूर्ण जीने पर ही सुखी होने का मार्ग प्रशस्त कर सकेगा। संसाधनों का विकास, सुखी होने का आधार है, इस भ्रामक तथ्य को केन्द्रीय चिंतन बनाने के फलस्वरूप मानव ने प्राकृतिक संसाधनों का अविवेकपूर्ण उपभोग किया है, जिसके परिणाम स्वरूप शेष प्रकृति की पूरकतापूर्ण व्यवस्था छिन्न–भिन्न हुई है। प्राकृतिक आपदा का बढ़ना इसी अविवेकपूर्ण मान्यता का प्रमाण है।

सार्वभौम विकास का स्वरूप– यदि चेतना विकास आधारित मूल्य शिक्षा का अध्ययन शिक्षा के माध्यम से धरती के प्रत्येक मानव तक पहुंचेगा तब हर मानव संपूर्ण अस्तितव के व्यवस्था से परिचित होगा जिससें स्वयं में व्यवस्था, परिवार में व्यवस्था, समाज में व्यवस्था, प्रकृति में व्यवस्था के अस्तित्वात्मक नियमों से जीना होगा।

1.स्वयं में व्यवस्था का प्रमाण–

☒स्वयं में विश्वास पूर्वक जीना,
☒दूसरों की श्रेष्ठता का सम्मान कर पाना,
☒प्रतिभा एवं व्यक्तित्व में संतुलन के प्रति विश्वास,
☒व्यवहार में सामाजिक होना,
☒व्यवसाय में स्वावलम्बन के प्रति विश्वास पूर्वक जीना।

2.परिवार में व्यवस्था का प्रमाण– परस्पर विश्वास पूर्वक जीना, परिवार में समृद्धि का भाव प्रमाणित होना (समृद्धि अर्थात अभाव का अभाव अर्थात अपने परिवार की आवश्यकता पूर्ती के बाद आवश्यकता से अधिक है ही का भाव के साथ जीना ही समृद्धि का भाव है। इसके विपरित अत्यधिक धन व सुविधा होने के बाद भी कम है लगना और–और चाहिए का भाव ही दरिद्रता है। यही भीतर का खालीपन है।)

मानव संबंधों का ज्ञान व इसे प्रमाणित कर पाना–2.1

	मानव संबंध	क्रिया
1	माता–पिता संबंध	पोशण–संरक्षण
2	पुत्र–पुत्री संबंध	अभ्युदय, उपयोगिता, पूरकता
3	भाई–बहन संबंध	परस्पर अभ्युदय, सहयोग
4	गुरू–शिष्य संबंध	प्रामाणिक–जिज्ञासु
5	साथी–सहयोगी संबंध	दायित्व–कर्त्तव्य
6	मित्र–मित्र संबंध	परस्पर पूरक
7	पति–पत्नि संबंध	यतीत्व, सतीत्व

मानव संबंध सात है। जिसे हम मानव के जन्म से लेकर मृत्यु तक (अवस्थाऐं–शैशवावस्था जन्म से 2वर्ष तक, बाल्यावस्था 3से12वर्ष तक, किशोरावस्था, प्रौढ़ावस्था, मध्यावस्था, वृद्धावस्था 60वर्ष से मृत्यु तक) जितने भी अवस्था है उसमें हम सभी इन सात संबोधन के रूप में देखते है ही लेकिन यह संबोधन के मूल में संबंध मूल्य को हम परस्परता में मूल्यों के बहाव अर्थात जीने के रूप में देखते है। इसका भी अध्ययन आवश्यक है तभी मानव तालमेल पूर्वक बिना गिला शिकवा शिकायत के जी सकता है। मानवीयता पूर्ण आचरण का प्रमाण भी हम मूल्य,चरित्र, नैतिकता के रूप में देख सकते है। इन समझ को वर्तमान शिक्षा के पाठ्यक्रम में प्रस्ताव रूप में जोड़ा जा सकता हैं ताकि हर मानव व्यवस्था के इन पॉच आयामों को समझ सकें प्रमाणित कर सकें एवं मानव का प्रकृति के साथ कैसा संबंध है इसे हम नैसर्गिक संबंध कहेंगे। प्रकृति का अध्ययन भी मानव जीवन के लिए अनिवार्य है।

3.समाज व्यवस्था– इस व्यवस्था में प्रत्येक व्यक्ति स्वयं में समाधान पूर्वक जियेगा, हर घर परिवार में प्रत्येक व्यक्ति में समृद्धि के भाव में जीना होगा, जिससे परस्पर विश्वास पूर्वक जीना होगा अर्थात अभय वाला वातावरण होगा एवं प्रकृति में संतुलन प्रमाणित होगा अर्थात अस्तित्व में सहअस्तित्व पूर्वक जीना प्रमाणित होगा।

संपूर्ण मानव को व्यवस्था सहज पॉच आयामों का सपष्ट बोध होगा–

शिक्षा–संस्कार व्यवस्था
न्याय–सुरक्षा व्यवस्था
उत्पादन–कार्य व्यवस्था
विनिमय–कोश व्यवस्था
स्वास्थ्य–संयम व्यवस्था

व्यवस्था सहज पॉच आयामों का स्पष्ट बोध किशोरावस्था एवं प्रौढ़ावस्था तक हो जाने से मानव स्वयं में समाधान, परिवार में समृद्धि, समाज में अभयता एवं प्रकृति में संतुलन के साथ पूर्वक जीता हुआ नजर आयेगा। बाल्यावस्था में परिवार संबंध एवं प्रकृति से संबंध का ज्ञान शिक्षा के माध्यम से कराया जा सकता है। इन पॉच आयामों में जीना ही जागृत (समझदार) मानव का प्रमाण है।

3.1शिक्षा–संस्कार व्यवस्था

शिक्षा– निरंतर सुख से जीने की समझ, व्यवस्था की समझ। स्वयं से लेकर संपूर्ण अस्तित्व की व्यवस्था की समझ। संस्कार– निरंतर सुख से जीने की तैयारी व निष्ठा। स्वयं से लेकर संपूर्ण अस्तित्व की व्यवस्था में सही जीने की निष्ठा अर्थात सही जीना ही संस्कार है। शिक्षा संस्कार का सफल प्रमाण–

हर मानव विश्वास से युक्त होगा
श्रेष्ठता का सम्मान कर पायेगा
उसकी समझ व कार्य में संतुलन होगा
हर मनुष्य के साथ न्याय पूर्ण व्यवहार होगा
व्यवसाय में स्वावलंबी होकर परिवार में समृद्धि को प्रमाणित करना होगा।

3.2 उत्पादन–कार्य व्यवस्था

उत्पादन–प्रकृति के साथ श्रम पूर्वक कार्य आवश्यक वस्तुओं की प्राप्ति के लिए। अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के क्रम में मैं जिस किसी भी वस्तु का प्रयोग करूँ वह पहले से बेहतर हो जाये इस भाव के साथ किया गया श्रम ही सही उत्पादन कहलायेगा। कार्य– प्रकृति व मानव को नुकसान पहुंचाये बिना किया गया श्रम ही कार्य है।

3.3 स्वास्थ्य–संयम व्यवस्था

स्वास्थ्य– शरीर में होता है संयम स्वयं में होता है। शरीर जीस प्रयोजन के लिए बना है उस प्रयोजन को संपादित कर पाना। जब हमारा जीना अर्थात बोलना,कहना,सुनना, देखना, करना.....समझदारी के प्रकाष में संयमता के आधार पर होगा तभी हमें स्वास्थ्य का प्रमाण मिलेगा। संयम– शरीर के सदुपयोग की जिम्मेदारी का भाव। शरीर की आवश्यकता और सदुपयोग का ज्ञान होना। शरीर का उपयोग सदप्रयोजन के अर्थ में करना इस समझ के साथ जीना ही संयम है।

3.4 विनिमय–कोष व्यवस्था

विनिमय– स्वस्थ मानव परंपरा हेतु लाभ–हानि मुक्त विनिमय प्रणाली। कोश– परस्पर पूरकता के अर्थ में सदुपयोग के लिए संचय।

3.5 न्याय–सूरक्षा व्यवस्था

न्याय– जहॉ दोनो पक्ष संतुश्ट है वहॉ न्याय है। सुरक्षा– सदुपयोग ही सुरक्षा है। मानव संबंधों कि सुरक्षा। संतुलित पोशण विधि से मानव शरीर की सुरक्षा। मानव व पर्यावरण सुरक्षा। परिवार सुरक्षा समाधान, समृद्धि, अभय पूर्वक हर परिवार प्रमाणित करने के रूप में परिवार सुरक्षा पाया जाता है।

4.प्रकृति में व्यवस्था का ज्ञान अर्थात नैसर्गिक संबंधों का बोध–

जीवावस्था के साथ (जीव जानवर,पशु–पक्षी)
प्राणावस्था के साथ (पेड़–पौधे,झाड़ीयॉ)
पदार्थावस्था के साथ (मिट्टी,पत्थर,पानी,वायु)

इन तीनों अवस्थाओं के साथ मानव का जीना कैसा है पूरकता के अर्थ में या प्रदूषण के अर्थ में इसे हम प्रकृति में प्रदूषण या प्रकृति में असंतुलन के रूप में देखते है। इसका भी अध्ययन हमारे जीवन में अनिवार्य है।

समीक्षा–वर्तमान परिस्थिति का विवेचन करने से समझ में आता है कि अस्तित्व की सहअस्तित्वपूर्ण व्यवस्था को समझे बगैर मानव ने विकास की कामना की, जिस वजह से विकास का सही स्वरूप ही पृथ्वी पर प्रकट नहीं हो पाया। अस्तितव की सहअस्तित्वपूर्ण व्यवस्था से सहज ही निष्कर्ष निकलता है कि मानव, मानव के साथ परस्पर पूरकता में जीकर सुखी हो सकेगा तथा मानव, शेष प्रकृति के साथ परस्पर पूरकता में कार्य करते हुए समृद्ध हो सकेगा। मानव की निरंतर सुख–समृद्धि पूर्वक जीने की व्यवस्था ही सार्वभौम विकास है। विकास की अवधारणा जब सही–सही समझ में आएगी, तभी निरंतर सुख–समृद्धि पूर्वक जीने की व्यवस्था का मार्ग प्रशस्त हो सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ

1.ए.नागराज, 1998, जीवन विद्या एक परिचय, जीवन विद्या प्रकाशन, अमरकण्टक म.प्र.।
2.ए.नागराज, 1999, व्यवहारवादी समाजशास्त्र जीवन विद्या प्रकाशन, अमरकण्टक म.प्र.।

3.ए.नागराज, 1998, समाधनात्मक भौतिकवाद, जीवन विद्या प्रकाशन, अमरकण्टक म.प्र.।
4.ए.नागराज, 1998, मानव संचेतनावादि मनोविज्ञान, जीवन विद्या प्रकाशन, अमरकण्टक म.प्र.।
5.ए.नागराज, 2002, आवर्तनशील अर्थशास्त्र, जीवन विद्या प्रकाशन, अमरकण्टक म.प्र.।
6.ए.नागराज, 2003, मानव व्यवहार दर्शन, जीवन विद्या प्रकाशन, अमरकण्टक म.प्र.।
7.ए.नागराज, 2004, मानव कर्म दर्शन, जीवन विद्या प्रकाशन, अमरकण्टक म.प्र.।
8.ए.नागराज, 2007, मानविय संविधान सूत्र व्याख्या, जीवन विद्या प्रकाशन, अमरकण्टक म.प्र.।
9.रामजी श्रीवास्तव एवं अन्य1993,आधुनिक विकासात्मक मनोविज्ञान।
10.Samadhan- Technical Education in the Light of Universal Values, 2006, NIT Raipur and Abhuday Sansthan Achhoti Durg.
11.Co-existence-National Convention on Value Education through Jeevan Vidya, 2007, IIT Kanpur, IIIT Hydrerabad, IIT Delhi.
12.RR Gaur, R Sangal, GP Bagaria,2010, A Foundation Course in Human Values and Professional Ethics, New Delhi 110028.
13.Teacher Education for Peace and Harmony,2012,IASE Deemed University Gandhi Vidya Mandir Sardarshahar Rajasthan.